P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 **SHRINKHALA :** VOL-II * ISSUE-VI February-2015
E: ISSN NO.: 2349-980X

गबन : मध्यवर्ग का यथार्थ

उर्मिला शर्मा
अतिथि प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
रामजस कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली–07

सारांश

'गबन' उपन्यास में प्रेमचंद्र ने मध्यवर्गीय परिवार की कथा को लेकर पूरे उपन्यास का ताना–बाना बुना है। दयानन्द, रमानाथ और जालपा के माध्यम ये मध्यवर्ग के चरित्रों को समझने का प्रयत्न किया है। उनकी सीमाएँ, संभावनाएँ तथा अर्न्तविरोधों को सटीक तरीके से पेश किया है। वकील बाबू व उनकी पत्नी के चरित्र गढकर मध्यवर्ग तथा उच्चवर्ग के बीच अर्न्तविरोधों तथा समस्याओ को समझने का सार्थक प्रयास किया है। विभिन्न स्थितियों तथा घटनाओं को केन्द्र में रखकर उनकी क्रिया–प्रतिक्रिया का विश्लेषण तो किया ही साथ ही महिलाओं की स्थितियों का अंकन तथा उनके अधिकारों की बात भी मुख्य रूप से की गई है। शहर से लेकर महानगर तक तथा महानगर से आदर्श गाँव तक की यात्रा स्वाधीनता आंदोलन को भी समेटते हुए चली है। मध्यवर्ग को उसकी समग्रता और सूक्ष्मता में दिखाना ही गबन की रचना का उद्देश्य कहा जा सकता है।

मुख्य शब्द गबन, मध्यवर्ग, मध्यवर्गीय परिवार, मध्यवर्ग तथा अन्य वर्ग, स्वाधीनता आंदोलन तथा मध्यवग, मध्यवर्ग की महिलाएँ, चेतना के नए आयाम।

परिचय

प्रेमचन्द का कथन है ''मैं उपन्यास को मानव–चरित्र का चित्र–मात्र समझता हूँ। मानव–चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है।''

प्रेमचन्द का यह कथन उपन्यास के संदर्भ में बहुत कुछ बोलता है। यह उपन्यास के विषय में प्रेमचन्द की सोच को तो जाहिर करता ही है, साथ ही साथ मनुष्य के मनोवैज्ञानिक सत्यों को उद्घाटित करने का सामर्थ्य भी रखता है। प्रेमचन्द के उपन्यास मनोरंजन के साधन मात्र नहीं हैं वे जीवन से पूरी तरह जुड़े हुए हैं। जीवन की सच्चाइयों स पाठक को रूबरू कराते हैं तथा सामयिक समस्याओं से अवगत कराने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ते। 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक में डॉ. नगेन्द्र तथा डॉ. हरदयाल ने इसी रूप में पहचानते हुए लिखा है – ''हिन्दी उपन्यास को प्रेमचन्द की देन अनेकमुखी है। प्रथमतः उन्होंने हिन्दी–कथा साहित्य को 'मनोरंजन' के स्तर से उठाकर जीवन के साथ सार्थक रूप से जोड़ने का काम किया। चारों ओर फैले हुए जीवन और अनेक सामयिक समस्याओं – पराधीनता, जमींदारों, पूँजीपतियों और सरकारी कर्मचारियों द्वारा किसानों का शोषण, निर्धनता, अशिक्षा, अंधविश्वास, दहेज की कुप्रथा, घर और समाज में नारी की स्थिति, वेश्याओं की जिंदगी, वृद्ध–विवाह, विधवा–समस्या, साम्प्रदायिक वैमनस्य, अस्पृश्यता, मध्यमवर्ग की कुंठाएँ आदि ने उन्हें उपन्यास लिखने के लिए प्रेरित किया था।'' ('हिन्दी साहित्य का इतिहास' पृ. 559, संपादक डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल, संस्करण–2009)

प्रेमचन्द–लेखन दृष्टि

प्रेमचन्द का लेखन किसी विशेष समय की सीमाओं में बंधा हुआ नहीं है। यह समय के आर–पार देखने का माद्दा रखता है। जीवन के भोगे हुए सत्य का यहाँ उद्घाटन होता है। यद्यपि उसमें कोरा यथार्थ नहीं है। उसमें कल्पना का सहारा भी लिया गया है। प्रेमचन्द के यहाँ कल्पना केवल हवा में नहीं झूलती वरन् जीवन की ठोस सच्चाइयों से उपजती हैं। कल्पना और यथार्थ के ताने–बाने के रूप को विश्लेषित करते हुए जैनेन्द्र लिखते हैं – ''उपन्यास में जैसी दुनिया है वैसी ही चित्रित नहीं होती। दुनिया का कुछ उठा हुआ उन्नत रूप चित्रित किया जाता है। वह उपन्यास किसी काम का नहीं, जो इतिहास की तरह घटनाओं का बखान कर जाता है। काम से मतलब, वह दुनिया को आगे बढ़ाने और बढ़ने में जरा मदद नहीं देता। क्योंकि न वह इतिहास होता है, न उपन्यास ही। इतिहास का अपना मूल्य है। ..... उपन्यास का काम है कुछ आगे की, भविष्य की संभावनाओं की जरा झाँकी दिखाना और जो कुछ अब है, उसकी तह हमारे सामने खोलकर रख देना।'' (जैनेन्द्र कुमार – परख की भूमिका, पृ.सं.

–छह संस्करण 2014, ज्ञानपीठ प्रकाशन)। गबन की प्रकाशन 1931 ई. में हुआ और लगभग तभी जैनेन्द्र का परख भी प्रकाशित हुआ। यही कारण है कि जैनेन्द्र के उपन्यास संबंधी विचार प्रेमचन्द के उपन्यासों से भी थोड़ा या अधिक सरोकार तो रखते ही हैं।

गबन में मध्यवर्ग

'गबन' में मध्यवर्गीय परिवार की कथा है। यह मध्यवगीय परिवार इलाहाबाद का है। दयानाथ, उसका बेटा रमानाथ, रमानाथ की पत्नी जालपा, इस परिवार के मुख्य सदस्य हैं। प्रेमचन्द 'गबन' का ताना–बाना कुछ इस प्रकार बुनते हैं कि सभी पात्र विभिन्न घटनाओं और विभिन्न परिस्थितियों से जूझते हुए अपने चरित्र को स्वयं निर्मित करते प्रतीत होते है। सबसे पहले 'जालपा' के परिवार को ही लें। 'जालपा' का पालन–पोषण जिस परिवार में होता है वह परिवार प्रयाग के एक छोटे से गाँव में रहता है। इस परिवार की विशेषता है कि बेटी के खिलौने तक गहनों के रूप में आते है। गहनों के प्रति आसक्ति जालपा के मन में बाल्यकाल से ही घर कर गई थी। दीनदयाल की सोच केवल यहीं तक जाती थी कि जालपा को प्रसन्न करने का गहनों के अलावा कोई अन्य साधन नहीं है।

''दीनदयाल जब कभी प्रयाग जाते, तो जालपा के लिए कोई–न–कोई आभूषण जरूर लाते। उनकी व्यावहारिक बुद्धि में यह विचार ही नहीं आता था कि जालपा किसी अन्य चीज से अधिक प्रसन्न हो सकती है। गुड़िया और खिलौने वह व्यर्थ समझते थे; इसलिए जालपा आभूषणों से ही खेलती थी। यही उसके खिलौने थे।'' (गबन–प्रेमचन्द पृ.सं. 6 मेधा–बुक्स प्रकाशन, संस्करण सन् 2010)। रचना विधान म अनूठे प्रेमचन्द परिवार के सदस्यों के हृदय का मनोवैज्ञानिक चित्रण करते हैं। वे धीरे–धीरे जालपा के पिता और माता के हृदय से गुजरते हुए जालपा के हृदय में प्रवेश करते हैं। जालपा के पिता महावार केवल 5 रुपये पाते हैं परन्तु उनके ठाठ किसी प्रकार से भी कम नहीं थे। यहाँ प्रेमचन्द पाठक के लिए संकेत मात्र छोड़ देते हैं कि उनकी आय के अन्य मार्ग कौन से थे कोई नहीं जानता। जाहिर है यह संकेत भ्रष्टाचार की ही पैरवी कर रहा है। क्योंकि पाँच रुपये मासिक पाने वाला व्यक्ति किसी भी दशा में चन्द्रहार नहीं बनवा सकता। लेकिन दीनदयाल मानकी के लिए चन्द्रहार की व्यवस्था करते हैं जिसकी साध उसे बहुत दिनों से थी। मानकी की साध लगभग वही है जो जालपा की है। जालपा और मानकी की साध का रूप रामेश्वरी यानि रमानाथ की माँ में भी जाग उठता है। और यही साध प्रेमचन्द वकील बाबू की पत्नी रत्न में भी दिखाना नहीं भूलते। रतन भी गहनों के प्रति उतनी ही आसक्त है। कलकत्ता में बसी जग्गो जो साग–सब्जी बेचकर गुजर–बसर करती है, गहनों के मोह को नहीं छोड़ पाती। इस बात को देवीदीन भली प्रकार जानता है क्योंकि वह तीस रुपये का गबन कर चुका है। इन्हीं 30 रुपये से उसने जवानी में बुढ़िया के लिए झुमके बनवाए थे। परिणाम के रूप में तीन वर्ष की जेल की सजा भी भुगत चुका है। वह रमानाथ से कहता है – ''प्रेम बड़ा बेढब होता है भैया! बड़े–बड़े चूक जाते हैं, तुम तो अभी लड़के हो। गबन के हजारों मुकदमें हर साल होते हैं। तहकीकात की जाए ता सबका कारण एक ही होगा – गहना।'' प्रेमचन्द मानों मानव हृदय में कहीं गहरे पैठते हैं। पात्रों के हृदय में एक शिरे से घुसते हैं तथा पड़ताल करते हुए न सिर्फ निकलकर बाहर आते है वरन् होने वाले प्रभाव तथा परिणाम की व्याख्या भी ठहरकर इत्मिनान से करते हैं। यह प्रभाव तथा परिणाम चूँकि समय या स्थान विशेष से बंधा हुआ नहीं है तो जाहिर है कि व्याख्या भी गुणात्मक अंतर नहीं रखती।

कलकत्ता में देवीदीन तथा प्रयाग में रहने वाले रमेश बाबू दोनों ही मध्यवर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं तथा गहनों की आसक्ति के प्रति साम्य विचार रखते हैं। रमेश बाबू भी रमानाथ को समझाते हुए कहते हैं – ''कर्ज से बड़ा पाप दूसरा नहीं। न इससे बड़ी विपत्ति दूसरी है। जहाँ एक बार धड़का खुला कि तुम आए दिन सर्राफ़ की दुकान पर खड़े नज़र आओगे।'' (गबन पृ.सं. 46)। रमेश बाबू के हवाले से प्रेमचन्द केवल गहनों के प्रति आसक्ति तथा कर्ज को ही गलत नहीं ठहराते बल्कि भारत देश का धन किस प्रकार से उचित कार्य में लगने से चूक रहा है यह भी इंगित करने से नहीं चुकते। रमेश बाबू के माध्यम से अन्य देशों व उनके बरक्स भारत की स्थिति को पैनी नज़रों से देखते हुए आगे कहते हैं – ''उन्नत देशों में धन व्यापार में लगता है। जिससे लोगों की परवरिश होती है, और धन बढ़ता है। यहाँ धन श्रृंगार में खर्च होता है, उसमें उन्नति और उपकार की जो महान शक्तियाँ हैं, उन दोनों ही का अंत हो जाता है। बस यही समझ लो कि जिस देश के लोग जितने मूर्ख होंगे, वहाँ जेवरों का प्रचार भी उतना ही अधिक होगा।'' (गबन, पृ.सं. वही)

'गबन' में प्रेमचन्द मध्यवर्ग के यथार्थ रूप का चित्रण करते है। कोरा यथार्थ नहीं 'आदर्शोन्मुखी यथार्थवाद'। इसी यथार्थ की चर्चा करते हुए रामस्वरूप चतुर्वेदी लिखते हैं – ''सामाजिक यथार्थ की जिस समस्या को उनके पूर्ववर्ती उपन्यासकारों ने आदर्श और यथार्थ को खानों में बाँटकर देखा था, उसे प्रेमचन्द एक संपृक्त और संश्लिष्ट रूप में समझते हैं। 'कहानी कला' का दूसरा विवेचन करते समय उनका प्रयवेक्षण है कि 'बुरा आदमी भी बिल्कुल बुरा नहीं होता, उसमें कहीं देवता अवश्य छिपा होता है – यह मनोवैज्ञानिक सत्य है।'' (हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी पृ. सं. 139, संस्करण–2010)

मध्यवर्ग के जीवन को नई दृष्टि से समझने का माद्या प्रेमचन्द का उपन्यास गबन पुरजोर से रखता है। सबसे पहल इस दृष्टि से जालपा को केन्द्र में रखकर विचार किया जा सकता है। जालपा का चरित्र प्रेमचन्द दो स्तरों पर गढ़ते है। प्रारंभ में जालपा जहाँ केवल अपने आपको पुरुषों के मनोरंजन का साधन मात्र समझती है उत्तरार्द्ध में वही जालपा स्वाभिमानिनी नायिका का प्रतिनिधित्व करती है। जालपा रमानाथ द्वारा किए गए गबन का निराकरण तो करती ही साथ ही अपनी सूझ–बूझ से उसे ढूंढने में कामयाब भी हो जाती है। वह उसे ढूंढने मात्र से संतुष्ट नहीं होती। कर्मक्षेत्र में उतरकर

रमानाथ को उसकी कमज़ोरियों का आभास भी कराती है। अंग्रेजी सरकार द्वारा दिए गए प्रलोभनों के चंगुल में वह नहीं फंसती। वह कठिनाइयों भरा जीवन जीने के लिए तैयार है। उसी में वह तृप्ति पाती है। दिनेश के बालकों का पालन–पोषण करने का जिम्मा उठाती है। उसकी पत्नी तथा माँ का सशक्त सहारा बनती है। यहाँ जालपा का एक भिन्न रूप प्रेमचन्द गढ़ते है। ऐसा रूप जो हरिऔध 1914 में प्रियप्रवास में राधा का दिखाते हैं। वहाँ पद्य के रूप में था तो यहाँ गद्य के रूप में। यहाँ प्रेमचन्द गाँधी के विचारों से पूरी तरह साम्यता बिठाते दिखाई देते हैं। नारी और वैराग्य को केन्द्र में रखते हुए रामधारी सिंह दिनकर के गाधी संबंधी विचार विचारणीय है। वे लिखते हैं – ''काम भावना को वे भी मनुष्य की नैतिक प्रगति में बाधक मानते हैं, किन्तु टॉलस्टॉय की भाँति वे सौन्दर्य और नारी को सन्देह से नहीं देखते। उनकी मान्यता है कि नारियों के लिए आदर और कोमलता का भाव पुरुष चरित्र का सर्वश्रेष्ठ गुण है।'' (सस्कृति के चार अध्याय – रामधारी सिंह दिनकर पृ.सं. 458 लोकभारती प्रकाशन, संस्करण 2010)।

प्रेमचन्द भारतीय मध्यवर्ग की नारी में काम लोलुपता का वास दिखाते हैं। उसे मात्र पुरुषों के हाथ की कठपुतली दिखाते हैं, शारीरिक कामेच्छाओं की पूर्ति करने वाली वस्तुमात्र दिखाते हैं वहीं उन्ही चरित्रों को विस्तार भी देते हैं। केवल जालपा ही नहीं हर सुख को प्राप्त करने वाली रतन भी अन्ततः साधारण जीवन में ही तोष प्राप्त कर पाती है। जौहरा जैसी वैश्या का चरित्र परिवर्तन अपने आपमें विशिष्ट बन पड़ा है। सरकारी अधिकारियों से अपनी चतुराई के बल पर वह लोहा तो लेती ही है, रमानाथ के जीवन में नया मोड़ भी लाती है। यहाँ तक की रमानाथ जैसा मध्यवर्गीय युवक जौहरा के साथ नव–जीवन के सपने लेना प्रारंभ कर देता है। – ''उसे ज्ञात हुआ कि वह जालपा को छोड़ नहीं सकता, और जौहरा को त्याग देना भी उसके लिए असंभव सा जान पड़ता था। क्या वह दोनों रमणियों को प्रसन्न रख सकता था? क्या इस दशा में जालपा उसके साथ रहना स्वीकार करेगी? (गबन – पृ.सं. 248)।

रमानाथ बड़ी उधेड़बुन में पड़ा हुआ है। यहाँ प्रेमचन्द जालपा और जौहरा को खानों में बाँटने का प्रयास रमानाथ के माध्यम से करते हैं। परन्तु लगता है उनके हाथों कुछ खास आता नहीं। जौहरा कहीं भी जालपा से कम नहीं ठहरती। समय आने पर दोनों ही त्याग की प्रतिमूर्ति बन जाती है। हाँ, मध्यवर्ग का कटुसत्य जौहरा के चरित्र के द्वारा अवश्य सामने लाते है। किस प्रकार एक फैशनेबुल, काम आसक्त पुरुष, दिखावे और झूठे पौरुष के चलते पहले जालपा को धोखा देता है जिसकी परिणति के रूप में स्वयं उससे आँखे नहीं मिला पाता और घर से भाग खड़ा होता है। उसके बाद जौहरा के सामने भी वह अपने आप को दुर्बल ही पाता है। वह विलासी है, पथभ्रष्ट है और साथ ही विवेक शून्य भी है। परन्तु जालपा और जौहरा के प्रयासों के परिणामस्वरूप रमानाथ का विवेक जागृत होता है। गुलामी की दासता भोगते हुए भारत के मध्यवर्ग को प्रेमचन्द यह संदेश देने से नहीं चूकते की स्त्री में बहुत बड़ी शक्ति का वास है। वह यदि चाहे तो कितनी भी बुरी परिस्थितियों क्यों न हो मुकाबला करने से कतराएगी नहीं। प्रेमचन्द की उस समय की सोच आज भी उतना ही महत्त्व रखती है।

'गबन' के माध्यम से प्रेमचन्द विवाह रस्म–रिवाजों में केवल अपनी शान बढ़ाने और शेखी जताने के लिए की गई फिजूलखर्ची का जिक्र ऐसे करते हैं कि पाठक को यह पता बहुत बाद में चलता है कि इसका परिणाम क्या निकलने वाला है। दयानाथ जैसा भद्रपुंरुष जो रिश्वत की एक कोड़ी को भी हराम समझता है, इस चक्रव्यूह में फंस ही जाता है। प्रेमचन्द कहते हैं – ''नाटक उस वक्त 'पास' होता है जब रसिक समाज उसे पसंद कर लेता हैं। नाटक की परीक्षा चार–पाँच घंटे तक होती रहती है, बारात की परीक्षा के लिए केवल इतने ही मिनटों का समय होता है। सारी सजावट सारी दौड़–धूप और तैयारी का निबटारा पाँच मिनटों में हो जाता है। अगर सबके मुँह से वाह–वाह निकल गया, तो तमाशा पास नहीं फेल! रुपया मेहनत, फिक्र सब अकारथ। दयानाथ का तमाशा पास हो गया।'' (गबन पृ.सं. 11)।

दयानाथ कुछ मिनटों के तमाशे के चक्रव्यूह में फंसकर बहुत कुछ गंवा बैठे। उसे संभालने–संवारने में समय लगा परन्तु रमानाथ इसी दिखावे के व्यूह म ऐसा फंसा कि गहरे और गहरे फंसता ही चला गया।

मध्यवर्ग के नारी संबंधी विचार

'गबन' में वर्णित मध्यवर्ग में प्रेमचन्द नारी को विशेष स्थान देते हैं। यहाँ वे उसे कामिनी का रूप भले ही मानते हो अन्ततः कर्मक्षेत्र का विस्तार करते हुए त्याग और बलिदान की देवी भी ठहराते हैं। वकील बाबू के हवाले से भारत और विदेश में स्त्री को लेकर जो अन्तर प्रेमचन्द बताना चाहते हैं वह भारत के मध्यवर्ग की सोच को लेकर भी है। भारत में स्त्री–पुरुष संबंध को लेकर जो सोच बनती है वह अच्छी नहीं समझी जाती। प्रेमचन्द यहाँ इस सोच को बदलने हेतु स्त्री–शिक्षा को अनिवार्य बताते हुए कहते हैं – ''आपके बोर्ड में लड़कियों की अनिवार्य शिक्षा का प्रस्ताव कब पास होगा? और कई बोर्डों ने तो पास कर दिया। जब तक स्त्रियों की शिक्षा का प्रचार न होगा हमारा कभी उद्धार न होगा।'' (गबन पृ.सं. 89) स्त्रियों की स्वतन्त्रता का लेकर प्रेमचन्द वकील बाबू के हवाले से विदेश का उदाहरण रखते हैं – ''नान्सेंस अपने–अपने देश की प्रथा है। आप एक युवती को किसी युवक के साथ एकांत में विचरते देखकर दाँतों तले उँगली दबाते हैं आपका अन्तःकरण इतना मलिन हो गया है कि स्त्री–पुरुष को एक जगह देखकर आप सन्देह किए बिना नहीं रह सकते, पर जहाँ लड़के और लड़कियाँ एक जगह शिक्षा पाते हैं वहाँ यह जाति भेद बहुत महत्त्व की वस्तु नहीं रह जाती – आपस में स्नेह और सहानुभूति की इतनी बातें पैदा हो जाती हैं कि कामुकता का अंश बहुत थोड़ा रह जाता है यह समझ लीजिए कि जिस देश में स्त्रियों की जितनी अधिक स्वाधीनता है, वह देश उतना ही सभ्य है।'' (गबन पृ.सं. 89, 90) प्रेमचन्द स्त्री स्वतन्त्रता का प्रश्न उस समय उठा रहे हैं जब देश विदेशी शासन से स्वतन्त्रता के लिए लड़ रहा था। वे मध्यवर्ग की उन

परतन्त्रताओं को अधिक कष्टमय मान रहे हैं जिनमें जकड़े रहना उसने स्वयं स्वीकार किया है। शिक्षा की अनिवार्यता तथा सहशिक्षा को वे बढ़ावा देते हैं।

गबन में प्रेमचन्द स्त्री के अधिकारों की बात भी उठाते हैं। पति की मृत्यु के बाद किस प्रकार वह निस्सहाय हो जाती है यह रतन के चरित्र द्वारा उद्घाटित करते हैं। वकील का भतीजा मणिभूषण अपने चाचा की मृत्यु के बाद रतन की सारी सम्पत्ति हथिया लेता है। रतन कहती है – न जाने किस पापी ने यह कानून बनाया था। अगर ईश्वर कहीं है और उसके यहाँ कोई न्याय होता है तो पूछूँगी क्या तेरे घर में माँ बहनें न थी? .... बहनों किसी सम्मिलित परिवार में विवाह मत करना और अगर करना तो जब तक अपना घर अलग न बना लो चैन की नींद मत सोना। यह मत समझो कि तुम्हारे पति के पीछे उस घर में तुम्हारा मान के साथ पालन होगा। अगर तुम्हारे पुरुष ने कोई तरीका नहीं छोड़ा तो तुम अकेली रहो चाहे परिवार में, एक ही बात है। रतन की सोच आज भी उसी प्रकार भारतीय समाज में मौजूद है क्योंकि समस्या अभी भी वहीं की वहीं है।

निष्कर्ष

मध्यवर्ग के सपने यद्यपि अधिक ऊँचे नहीं होते तथापि वह आराम की जिन्दगी जीना चाहता है। रिश्वतखोरी, दिखावा, चालबाजी, पारिवारिक संपत्ति का हड़पना वह जानता है। इन कामों से उसे कोई खास गुरेज नहीं है। स्त्री जाति के सामने झुकना तो दूर की बात उसे सहगामी या सहयोगी की भावना से देखना भी उसे हज़म नहीं होता। वह स्त्री को शोभा तन्त्र या खिलौना मात्र समझता है। दिखावे में वह अत्यधिक विश्वास करता ह तथा विवेक शून्य हो रहता है। इन्हीं समस्याओं के इर्द–गिर्द गबन उपन्यास अपना ताना–बाना बुनता है तथा चरम पर पहुँचता है। स्व का बलिदान करने का जज्बा भी मध्यवर्ग ही रखता है।

देवीदन अपने बेटों को स्वदेश के लिए बलिवेदी पर चढ़ा देता है तथा रमानाथ से भी बेटो जैसा स्नेह करता है। इस वर्ग में प्यार भी है, तकरार भी है। बेरूखी भी है, और स्नेह भी है। अपराध बोध भी है, और देश के लिए उत्सर्ग करने का भाव भी है। आलस्य भी है, और कठोर परिश्रम करने का सामर्थ्य भी है। प्रेमचन्द यहाँ मानव मन का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण करते हुए सम्पूर्ण पाठक वर्ग को चेतना के नए आयाम सुझाते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास – संपादक – डॉ. नगेन्द्र, डॉ. हरदयाल – संस्मरण–2009.
2. परख – जैनेन्द्र कुमार – संस्करण–2014, ज्ञानपीठ प्रकाशन।
3. गबन – मुंशी प्रेमचन्द – मेधा प्रकाशन – संस्करण–2010.
4. हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास – रामस्वरूप चतुर्वेदी – संस्करण–2010.
5. संस्कृति के चार अध्याय – रामधारी सिंह दिनकर – लोकभारती प्रकाशन – संस्करण–2010.